REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 11 | ISSUE - 12 | SEPTEMBER - 2022

# भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की भूमिका और महत्त्व

हरीश कुमार

## सारांश

आर्थिक विकास में कृषि की भूमिका विकास अर्थशास्त्र के मुख्य सरोकारों में एक रहा है। इस विषय पर पिछले अधिकांश अध्ययन मूलतः परंपरागत कृषि से क्टर से आधुनिक औद्योगिक सेक्टर में कारक संसाधनों के अंतरण द्वारा अर्थव्यवस्थाओं के संरचनात्मक रूपांतरण की प्रक्रिया पर संकेंद्रित रहे हैं। कृषि की भूमिका मुख्यतया खाद्य सामग्री मुहैया करने, काम पैदा करने, निर्यात आय अर्जन करने, निवेश के लिए बचत करने, कृषि प्रसंस्करण उद्योगों के लिए प्राथमिक माल का उत्पादन करने तक सीमित थी। परंतु कृषि की समकालीन भूमिका इस प्रत्यक्ष बाजार समामेलित योगदान से भी आगे निकल जाती है। अब कृषि वे अप्रत्यक्ष गैर-सामग्री योगदान प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है जो सार्वजनिक पदार्थ, सामाजिक सेवा लाभ और पर्यावरण सेवाएं हैं । पारिस्थितिकी और पर्यावरण, जल संसाधन, जैव विविधता, ग्रामीण गरीबी, खाद्य ईंधन और आजीविका सुरक्षा आदि ने कृषि को एक बार फिर विकासशील देश की सरकारों और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के समग्र विकास एजेंडा में रख दिया है।

## प्रस्तावना

भारतीय कृषि में नव-उदार नीति शासन प्रणाली के दो दशकों के दौरान महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आए हैं । ग्रामीण आजीविका के अनुसार कृषि अभी भी देश की कुल श्रमशक्ति से आधे से भी अधिक को प्रत्यक्ष रोज़गार प्रदान कर रही है। परंतु कुल GDP में योगदान के आधार पर यह एक अवशिष्ट सेक्टर होकर रह गया है। ये 1951 में 52.2 प्रतिशत के उच्च स्तर की तुलना में इस समय 15 प्रतिशत से भी कम हो गया है। स्पष्टतः संवृद्धि पथ गैर-कृषि सेक्टर की ओर बहुत सीमा तक चला गया है, फिर भी, कृषि से श्रमशक्ति की अन्यत्र क्षेत्रों की ओर गतिशीलता काफी नहीं है। इसके प्रमुख कारण हैं : (i) आजीविका विविधता विकल्पों की अपर्याप्त उपलब्धता; और (ii) कृषि श्रमिक बल के बहुत बड़े भाग में शिक्षा और कुशलता के अपेक्षित स्तर का अभाव।

इस परिदृश्य में अर्थव्यवस्था में कृषि की भूमिका को केवल औद्योगिक विकास के लिए कारक संसाधनों की निष्कृति की प्रक्रिया के रूप में नहीं सोचा जा सकता, जैसा कि 1950 के और 1960 के दशकों के द्विविध वृद्धि प्रतिमानों द्वारा कल्पना की गई थी। बल्कि, इसे बृहतर सामाजिक आर्थिक महत्त्व के अनुसार देखा जाना चाहिए : जैसे (i) ग्रामीण आजीविका का संरक्षण, (ii) ग्रामीण गरीबी का न्यूनीकरण, (iii) समावेशी वृद्धि के लिए नीतियाँ तैयार करने की आवश्यकता पर नीति निर्माताओं को सचेत करना; (iv) आर्थिक स्थिरता बनाए रखना; (v) खाद्य और पौषणिक सुरक्षाएँ प्रदान करना; (vi) पारिस्थितिकी और पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखना आदि।

इन पहलुओं को ध्यान में रखते हुए इस इकाई में वर्तमान संदर्भ में भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए ''कृषि की भूमिका और महत्त्व'' पर ध्यान केंद्रित किया गया है। इस प्रक्रिया में आप अर्थव्यवस्था और उन अंतर्भूत संबद्धताओं में संरचनात्मक परिवर्तनों के बारे में भी अध्ययन करेंगे, जो फार्म और गैर-फार्म सेक्टरों के बीच कालांतर में विकसित हुई हैं। इस क्षेत्र में हाल ही के परिवर्तनों के संदर्भ में कृषि की सामाजिक भूमिका पर विशेष रूप से ध्यान केंद्रित किया जाएगा।

## कृषि की भूमिका : सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य

आर्थिक विकास के संदर्भ में कृषि का महत्त्व काफी समय पहले से स्वीकार किया गया है। भू-अर्थशास्त्रियों ने के वल अर्थव्यवस्था के सेक्टर के रूप में कृषि की प्रशंसा की जिससे श्रम और नियोजित पूँजी की आवश्यकताओं से अधिक अधिशेष उत्पादित होता था। क्लासिकल और नवक्लासिकल दोनों धाराओं के अर्थशास्त्रियों ने कृषि की भूमिका प्रमुख मानी है। महत्त्वपूर्ण सैद्धांतिक और अनुभवजन्य साहित्य की रचना की प्रक्रिया में योगदान करने वाले विकास अर्थशास्त्रियों का काफी अधिक ध्यान इसने आकर्षित किया है। इसमें अधिकांश साहित्य अर्थव्यवस्था के परंपरागत कृषि से आधुनिक औद्योगिक स्वरूप में संरचनात्मक रूपांतरण की प्रक्रिया पर केंद्रित है। द्वैधाभासी अर्थव्यवस्था मॉडल मुख्यतया सिंगर, नर्कसे, लेविस, रेनिस और फॉई (जिनमें से कुछ का अध्ययन हमने पहले की इकाई में किया है परंतु यहाँ हम उन्हें पुनः दोहराएं गे, क्योंकि कुछ अन्य सिद्धांतवादियों के योगदान के अतिरिक्त वैकल्पिक परिप्रेक्ष्य से उनके बारे में अध्ययन करेंगे ) आर्थिक विकास में कृषि की भूमिका का विश्लेषण करने के लिए अच्छा सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। ये मॉडल और उन पर आधारित अनुवर्ती अध्ययन यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि कृषि अपेक्षाकृत श्रम प्रधान कार्य है जो दुर्लभ पूँजी संसाधनों का पूरा लाभ उठाती है। यह खाद्यान्न, कृषि आधारित और अन्य उद्योगों के लिए कच्चा माल, श्रम, बचत प्रदान कर और गैर-कृषि सामान के लिए माँग उत्पन्न कर आर्थिक विकास में योगदान करती है। इसलिए ये योगदान पर्याप्त रूप में स्पष्ट करते हैं कि अपने ऑफ फार्म (off farm) और ऑन फार्म (on farm) दोनों के विकास में योगदान के कारण समग्र आर्थिक विकास के लिए कृषि विकास महत्त्वपूर्ण है। संभावित अधिशेष श्रम के (नर्कस और रेनिस तथा फाई द्वारा दिए गए) अनुमान अत्यधिक घनी आबादी वाले देशों में 25-40 प्रतिशत है। इस पहलू पर थर्लवाल द्वारा विशेष रूप से प्रकाश डाला गया था, जब उसने कहा कि पश्चिमी यूरोप और विशेष रूप से इंग्लैंड में औद्योगिकीकरण का वित्त पोषण काफी सीमा तक कृषि में उत्पादित अधिशेष ने किया था।

लेविस मॉडल कृषि (परंपरागत सेक्टर) में अधिशेष श्रम को विकासशील देशों में आधुनिक औद्योगिक क्षेत्र के विकास के लिए बड़ी संभावना के रूप में मानता है। इन देशों में कृषि श्रम की सीमांत उत्पादकता (MP) या तो बहुत कम थी, या नगण्य थी। अतः श्रमिक बल की काफी मात्रा निकालने पर भी कृषि उत्पादन कम नहीं होगा, बल्कि उपयोगी तरीके से आधुनिक सेक्टर में नियोजित किया जा सकेगा। उसका दावा था कि कृषि नियत प्रौद्योगिकी की दशाओं के अधीन भूमि और श्रम का उपयोग करती है और इसलिए श्रमिकों को दी गई मज़दूरी उसके सीमांत उत्पादकता से नीचे होती है। दूसरी ओर, उद्योगों में भूमि उस सीमा तक प्रयुक्त की जाती है जहाँ श्रम की सीमांत उत्पादकता मज़दूरी दर के बराबर है। परिणामस्वरूप कृषि से अधिशेष श्रमिक उद्योगों में जाते हैं । एक बार जब कृषि से अधिशेष श्रम हटाया जाता है और कृषि श्रमिक की सीमांत उत्पादकता औद्योगिक सेक्टर में सीमांत उत्पादकता के बराबर स्तर तक पहुंचती है, तो परंपरागत सेक्टर अपना ''अधिशेष श्रम'' स्वरूप खो देता है और यथासमय में वाणिज्यिक स्वरूप ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार लुई मॉडल आर्थिक विकास की परिकल्पना को परंपरागत ''न्यून लाभ कृषि सेक्टर'' से ''उच्चतम आधुनिक औद्योगिक सेक्टर' में अधिशेष श्रम की अपेक्षित स्थानांतरण प्रक्रिया के रूप में मानता है। साधारणतया यह द्वैधाभासी मॉडल कृषि को विकास की प्रारंभिक अवस्थाओं में पिछड़ा और कम उत्पादनकारी जीवन निर्वाह सेक्टर के रूप में देखता है जिसमें से श्रम और अन्य संसाधन गतिशील/उत्पादनकारी औद्योगिक सेक्टर का विकास बढ़ाने के लिए लिये जा सकते हैं।

उद्योगों के लिए अधिशेष श्रम छोड़ने में कृषि की भूमिका के अलावा, क्लासिकी अर्थशास्त्रियों ने आर्थिक संवृद्धि बढ़ाने में खाद्य आपूर्तियों की भूमिका पर भी विचार किया है। उन्हों ने तर्क प्रस्तुत किया कि यदि खाद्य

उत्पादन स्थिर रहता है तो उद्योगों में कामगार खाद्यान्न की कमी का सामना कर सकते हैं। इसका परिणाम खाद्य कीमतें बढ़ेगी और परिणामस्वरूप उद्योगों में मज़दूरी में बढ़ोत्तरी होगी। बढ़ती हुई मज़दूरी दरें औद्योगिक संवृद्धि रोकती है (विशेषकर विकास की प्रारंभिक अवस्था के दौरान जब प्रौद्योगिकीय सामान्य तथा श्रमिक प्रधान होती है)। संक्षेप में, इसलिए द्वैधाभासी प्रतिमानों ने विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में औद्योगिकीकरण की गति निर्धारण में कृषि की भूमिका मुख्य रूप में स्वीकार की।

जॉनसन और मेल्लोर (1961) ने राय व्यक्त की कि कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में विकास की प्रारंभिक अवस्थाओं में कृषि सृजित करती है: (i) निर्यात अर्जन द्वारा पूँजी, (ii) गैर-कृषि सेक्टरों के उत्पादित सामान की खपत के लिए घरेलू माँग; और (iii) बढ़ती हुई आबादी और आय की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को बनाए रखने के लिए आवश्यक अपने ही उत्पादन के लिए अतिरिक्त माँग। इसलिए उन्हों ने अर्थव्यवस्था के लिए कृषि के पाँच योगदानों पर विचार किया। जैसे (i) घरेलू खपत के लिए खाद्य प्रदान करना, (ii) उद्योगों के लिए श्रमिक छोड़ना, (iii) घरेलू औद्योगिक उत्पादन के लिए बाजार का विस्तार करना, (iv) घरेलू बचत की दर बढ़ाना, और (v) कृषि निर्यात से विदेशी मुद्रा आय पैदा करना। कुजने ट्स ने आर्थिक विकास के लिए कृषि के तीन योगदानों की पहचान कर वैकल्पिक शब्दों में वैसा ही कहा, जैसे उत्पाद, बाजार और कारक योगदान। उसके अपने शब्दों में ''यदि कृषि बढ़ती है, यह उत्पादन योगदान करती है, यदि यह अन्य से व्यापार करती है, यह बाजार योगदान करती है, यदि यह अन्य सेक्टरों को संसाधन हस्तांतरण करती है, तो यह कारक योगदान करती है।''

श्यूल्ज ने अपनी पुस्तक 'ट्रांसफार्मिंग ट्रेडिशनल एग्रिकल्चर' में तर्क दिए हैं कि कृषि नई प्रौद्योगिकी अपनाकर न केवल उत्पादकता बढ़ाने में सक्षम है बल्कि गुणक प्रभावों से अन्य से क्टरों में भी संवृद्धि बढ़ाने की संभावना रखती है। उसने व्यापक रूप से स्वीकृत तर्क का विरोध किया कि विकासशील देशों में किसान परंपरा या संस्कृति द्वारा नियंत्रित होते हैं और आर्थिक प्रोत्साहनों की अनुक्रिया नहीं करते। उसकी प्रसिद्ध ''दक्ष परं तु गरीब'' परिकल्पना का आशय था कि विकासशील देशों की कृषि में निम्न आय स्तर उत्पादन के उपलब्ध कारकों को निम्न उत्पादकता का परिणाम है और उनके अदक्ष आबं टन के कारण नहीं है। इसलिए कृषि का आधुनिकीकरण इस दुबर्लता को समाप्त करेगा। भारत में हरित क्रांति इसका जीवंत उदाहरण है।

इस प्रकार, पिछले साहित्य में फोकस मुख्य रूप से कृषि की परंपरागत भूमिका पर आग्रह था। परंतु कृषि के ''बहुमुखी स्वरूप'' की स्वीकृति बढ़ रही है। पारिस्थितिकी और पर्या वरण, जल संसाधन, जैव विविधता, ग्रामीण गरीबी, खाद्य/ईं धन/ आजीविका/सुरक्षा आदि से संबंधित वर्तमान मुद्दों ने बहुत से विकासशील देशों और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के समग्र विकास एजेंडा में कृषि को एक बार फिर रखा है। विश्व विकास रिपोर्ट (WDR), 2008 ने विकाशील देशों में ग्रामीण गरीबी उन्मूलन और संवृद्धि के प्रभावशाली इंजन के रूप में कृषि के महत्त्व को स्वीकारा है। रिपोर्ट कहती है''कृषि सेक्टर में मंदतर वृद्धि, तेज़ी से बढ़ता गैर-कृषि सेक्टर और श्रम कुशलताओं द्वारा दृढ़ता से विभक्त श्रम बाजार ने ग्रामीण-शहरी-आय अंतर को अधिक चौड़ा किया है, इससे कृषि और ग्राम विकास में निवेश करने के लिए राजनीतिक दबाव और अधिक हुआ है।'' रिपोर्ट चार नीतिगत उद्देश्यों पर फोकस करती है: (i) उच्च मूल्य उत्पादकों के लिए छोटी खेती का विविधीकरण; (ii) प्रौद्योगिकी प्रगति से पिछड़े क्षेत्रों के लिए खाद्य माल में हरित क्रांति का विस्तार; (iii) कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विविधीकरण में सहायता करने के लिए आधारभूत संरचना का विकास; और (iv) ग्रामीण गैर-कृषिक अर्थव्यवस्था का संवर्धन।

## कृषि और गैर-कृषि सेक्टरों के बीच परस्पर संबद्धता

कृषि गैर-फार्म क्षेत्र से संबद्धता स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत में परंपरागत कृषि समग्र ग्राम अर्थव्यवस्था का आधार थी। ग्रामीण कारीगरों, लोहारों, बढ़इयों, बुनकरों, धोबियों, दर्जियों, कुम्हारों, सफाई वालों , नाइयों, आदि की अजीविका प्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर थी (इसे जजमानी प्रथा कहा जाता था)। परंतु जैसे-जैसे कृषि का विकास होता गया वह अधिक बाजारोन्मुखी बनती गई। धीरे-धीरे परंपरागत प्रथा का स्थान 'निवे श-निर्गम बाजार प्रथा'' नाम की नई प्रथा ने ले लिया। कृषि ने प्रौद्योगिकी, बीज, उर्वरक और

मशीनों सहित बाहरी निवेश पर अधिक निर्भर रहना प्रारंभ किया और इस प्रकार वह कृषि प्रसंस्करण उद्योगों (एग्रो प्रोसेसिंग इंडस्ट्रीज) के लिए बिक्री योग्य अधिशेष उत्पन्न करने लगी तथा बढ़ती हुई शहरी आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में (जैसे सड़क, संचार, बिजली, बैंक, स्कूल, बाजार, सहकारी संस्थाएँ) आधारभूत सुविधा के विकास से और परिणामस्वरूप ग्रामीण शहरी संबद्धता की स्थापना, निवेश, निर्गम और औद्योगिक उपभोक्ता सामान में व्यापार और वाणिज्य बहुत आसान हुआ। फार्म-गैर-फार्म और शहरी-ग्रामीण संबद्धता की इस प्रक्रिया में कृषि चालक के रूप में और ग्रामीण आधारभूत संरचना समर्थक के रूप में कार्य करती है। इस प्रकार हरित क्रांति का अनुसरण करते हुए कृषि संवृद्धि की संबद्धता ने भारत में कृषि उद्योगों के निर्माण का मार्ग प्रशस्त किया। इसलिए फार्म-गैर-फार्म संबद्धता को भी उत्पादन और उपभोग संबद्धता के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। उत्पादन संबद्धता को आगे अग्र अनुबं धन (कृषि संसाधन कार्य) और पश्चानुबंधन संबद्धता (कृषि को निवेश आपूर्ति) के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। कृषि की अग्रोन्मुखी उत्पादन संबद्धता कृषि प्रसंस्करण उद्योगों को कच्चे माल की आपूर्ति करता है (जैसे गन्ना, तिलहन, कपास और जूट रेशे, चाय और रबड़, खाद्यान्न, बागवानी और पशुधन)।

अभी हाल ही में , कृषि वानिकी भी महत्त्वपूर्ण कृषि कार्यों में से एक हो गई है, जिस पर कागज और प्लाईवुड उद्योग निर्भर है। कृषि वृद्धि पश्चानुबंधन के माध्यम से कृषि आदान आपूर्तिकर्ता उद्योगों को भी प्रोत्साहन देता है। जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, कृषि में बाह्य आदानों के भाग (खरीदे गए निवेशों) में वृद्धि कृषि विकास में वृद्धि के साथ बढ़ती है। निर्वाह कृषि अधिकांशतः आंतरिक आदानों पर निर्भर रहती है, जैसे अपने ही फार्म में उगाए गए बीज, फार्म उत्पन्न खाद, परिवार का श्रम और पशुबल, जबकि आधुनिक कृषि बाह्य आदानों पर अधिक निर्भर करती है, जैसे प्रमाणित बीज, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक, फार्म मशीन, बैंक ऋण, बीमा आदि। बाह्य आदान की आपूर्ति आदान व्यापारियों के माध्यम से उद्योगों द्वारा की जाती है। आदान व्यापारी भी कभी-कभी किसानों को विस्तार से वाएँ प्रदान करते हैं। उद्योगों से कृषि का पश्चानुबंधन अर्थव्यवस्था में अधिक आय और रोज़गार पैदा करने में सहायता करता है। इस प्रकार, कृषि की वृद्धि गैर-फार्म सेक्टरों से अग्रानुबंधन और पश्चानुबंधन स्थापित करके आर्थिक विकास को महत्त्वपूर्ण योगदान देती है।

कृषि का शेष अर्थव्यवस्था से खपत अनुबंधन भी है। यह गैर-फार्म सेक्टर में बढ़ती हुई श्रमिक बल के उपयोग आवश्यकताएँ भी पूरी करने के लिए खाद्यान्न, फल और सब्जियाँ, डेयरी उत्पाद और अन्य कृषि उत्पादों की आपूर्ति करता है। कृषि उत्पादकता में वृद्धि गैर-फार्म कार्यों में लगे हुए व्यक्तियों को सस्ते खाद्य की आपूर्ति करते हुए वहां वास्तविक मजदूरी को कम रखना संभव बनाती है। वह इस प्रकार गैर-फार्म सेक्टरों में लाभ और निवेश बढ़ाता है।

उपभोग सहबंधन (या अंतिम भाग प्रमुख) फार्म परिवारों द्वारा गैर-फार्म माल और सेवाओं के लिए बढ़ती हुई माँग से भी उत्पन्न होता है। कृषि आय में वृद्धि से टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं (जैसे टी.वी., फ्रिज, वाशिंग मशीन, मोटर साइकिल, कार, मोबाइल फोन) सहित विनिर्मित उत्पादों की माँग बढ़ती है। फार्म परिवारों द्वारा विभिन्न सेवाओं का उपभोग भी कृषि विकास के साथ-साथ बढ़ता है। इसके अलावा मांग पक्ष पर उद्योग से कृषि अनुबंधन भी फार्म आय बढ़ाने में उत्प्रे रक कारक के रूप में कार्य करता है। स्थानीय बाजारों में विभिन्न विनिर्मित माल की उपलब्धता, इन सामग्रियों को खरीदने के लिए फार्म और गैर-फार्म आय बढ़ाने में ग्रामीण लोगों को अभिप्रेरक के रूप में कार्य करती है। दूसरे शब्दों में , ग्रामीण आय में वृद्धि और बेहतर परिवहन और संचार सुविधायें ग्रामीण क्षेत्रों में विनिर्मित माल के बाजार को बढ़ावा देती है।

## भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्त्व

पूर्ववर्ती भागों में हमने आर्थिक विकास में कृषि की भूमिका और गैर-कृषि (कृषीतर) सेक्टरों से कृषि वृद्धि संबद्धता के सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्यों का अध्ययन किया है। इस भाग में हम भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्त्व के बारे में पढ़ेंगे। कृषि की भूमिका को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। आर्थिक विकास में कृषि की प्रत्यक्ष भूमिका का आकलन सकल घरेलू उत्पाद (GDP), रोजगार, निर्यात, कृषि-खाद्य उद्योगों को कच्चे माल की आपूर्ति और पूँजी निर्माण के लिए बचतों में उसके योगदान के आधार पर किया जा

सकता है। अप्रत्यक्ष भूमिका का आकलन गरीबी-न्यूनीकरण, खाद्य और पौषाणिक सुरक्षा, आर्थिक-स्थिरता, पारिस्थितिक और पर्यावरणीय मुद्दों का संतुलन, ग्रामीण गैर-फार्म आय और रोज़गार वृद्धि आदि के आधार पर किया जा सकता है। जैसा कि पहले चर्चा की गई है, द्विविध आर्थिक ढाँचे में कृषि को औद्योगिक विकास के लिए कारक संसाधन देने के स्रोत के रूप में देखा गया था, कृषि को निम्न उत्पादनकारी परंपरागत से क्टर के रूप में जाना गया था। इसलिए इसे आर्थिक विकास में बराबर के भागीदार के रूप में नहीं समझा गया था।

परंतु 1960 के और 1970 के दशकों के दौरान प्रौद्योगिकी में नए आविष्कारों और कृषि के लिए नीतिगत सहायता के कारण अग्रानुबंधन और पश्चानुबंधन तरीकों से उसकी गतिशील भूमिका भारतीय अर्थव्यवस्था में प्रमुख रही है। इस प्रकार, यद्यपि, अर्थव्यवस्था के समग्र विकास में वृद्धि से GDP में कृषि का योगदान धीरे-धीरे घटा है, अर्थव्यवस्था में इसका विस्तरित योगदान पर्याप्त है। अधिक व्यापक स्तर पर कृषि अर्थव्यवस्था में मूल कृषि उत्पादन प्रणाली (फसल उत्पादन, पशुधन, कृषि वानिकी आदि) और कृषि खाद्य प्रणाली (अर्थात् कृषि उत्पादों का संसाधन, विपणन, वितरण) सम्मिलित हैं। यदि दोनों प्रणालियों के योगदान को साथ मिलाकर विचार करें तो कृषि की भूमिका उससे बहुत उच्चतर सिद्ध होती है जो देश के राष्ट्रीय आय लेखा आँकड़ों में सकल कृषि घरेलू उत्पाद (GDP) के भाग के रूप में अनुमानित की गई है।

## गरीबी न्यूनीकरण में भूमिका

जैसा कि हम अब अच्छी तरह जानते हैं कि गरीबों की बहुत बड़ी संख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर रहती है। कृषि सेक्टर में संवृद्धि बुनियादी ग्रामीण गैर-कृषि (कृषीतर) मज़दूरी उत्पादों और से वाओं के लिए माँग बढ़ाती है। इनमें से अधिकांश माल स्थानीय लोगों द्वारा बनाया जाता है तथा उपयोग किया जाता है। कृषि में उच्च वृद्धि से ग्रामीण गैर-फार्म सेक्टर में रोज़गार पैदा करने तथा आय बढ़ाने की बड़ी संभावना होती है। विश्व विकास रिपोर्ट (WDR-2008) ने तर्क दिया है कि कृषि वृद्धि गरीबी और असमानता घटाने में कृषीतर सेक्टरों में वृद्धि की तुलना में, चार गुणा प्रभावकारी है। ''सस्टेनिंगग्रोथ एं ड शेयरिंग प्रोस्पे रिटी ''(ESCAP-2008) नाम की एक अन्य यू.एन. रिपोर्ट भी कहती है कि एशिया प्रशान्त क्षेत्र में लगातार गरीबी दशाब्दियों से कृषि की उपे क्षा का परिणाम है। सवे ‍क्षण कहता है कि क्षेत्र के गरीबों (अर्थात् लगभग 218 मिलियन) में हर तीसरे व्यक्ति को गरीबी से ऊपर उठाया जा सकता है यदि औसत कृषि श्रम उत्पादकता बढ़ाई जा सके । इसलिए कृषि आय में वृद्धि को गरीबी न्यूनीकरण में अधिक प्रभावकारी माना गया है। आप नोट कर सकते हैं कि भारत में गरीबी में गिरावट की दर 1990 के निम्न कृषि वृद्धि अवधि के दौरान की अपेक्षा 1980 की दशाब्दी की अपेक्षाकृत उच्चतर कृषि वृद्धि अवधि के दौरान के दशक अधिक थी। उदाहरण के लिए, भारत में ग्रामीण गरीबी 1993-94 और 2004-05 के बीच 9 प्रतिशत बिंदु तक गिरी, जबकि 1977-78 और 1987-88 के बीच यह 14 प्रतिशत बिंदु तक गिरी थी।

गरीबी, भूख और कुपोषण के मुख्य कारणों में से एक खाद्य सामग्री की अपर्याप्त सुलभता जो ग्रामीण भारत में व्यापक रूप में फैले हुए कुपोषण और भूख का मुख्य कारण है। इनसे ग्रस्त कामगार अपने और अपने परिवार के लिए पर्याप्त कमाने के लिए शारीरिक रूप में बहुत अक्षम होता है। कृषि उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि, गरीबी न्यूनीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। यह कार्य कृषि मज़दूरी बढ़ाकर और गरीब परिवारों को वहन करने योग्य मूल्य पर खाद्य और अन्य कृषि वस्तुओं को सुलभ बनाकर किया जा सकता है। परंतु गरीबी कम करने में कृषि संवृद्धि अधिक प्रभावी हो सकती है (यदि मानव विकास घटकों, जैसे स्वास्थ्य और शिक्षा में पर्याप्त निवेश किया जाए)। बुनियादी शिक्षा का प्रावधान और कुशलता विकसित तथा उन्नयन करने के लिए औपचारिक और अनौपचारिक प्रशिक्षण फार्म कामगारों के लिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि पर्याप्त ज्ञान और कुशलताओं से वे नई प्रौद्योगिकी, बाजार के अवसरों और जो खिमों की अनुक्रिया करने के लिए अधिक सक्षम हो सकते हैं।

## खाद्य और पौषणिक सुरक्षा में भूमिका

कृषि उत्पादन और उत्पादकता में सुधार (देखिए शब्दावली) दो तरीकों से खाद्य सुरक्षा की समस्या आसान करने में सहायता करता है: (i) उपभोक्ताओं को खाद्य उत्पाद उपलब्ध कर, और (ii) फार्म और गैर-फार्म

कार्यों में ग्रामीण श्रमिक बल के लिए अतिरिक्त रोज़गार के अवसर पैदा कर। राष्ट्रीय सुरक्षा की तुलना में खाद्य सुरक्षा कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। भारत खाद्य सुरक्षा बनाए रखने के लिए खाद्यान्न के आयात पर निर्भर नहीं रह सकता। यदि भारत खाद्यान्न के थोक आयातक/ खरीददार के रूप में विश्व बाजार में प्रवेश करता है तो खाद्य मदों की अं तर्राष्ट्रीय कीमतें अधिक सीमा तक बढ़ सकती हैं । इस प्रकार न केवल भारत की खाद्य सुरक्षा जोखिम में पड़ सकती है बल्कि अन्य गरीब देशों को भी जोखिम में डाल सकती है। इसलिए संदेश यही है कि देश में लोगों की खाद्य और पौषणिक सुरक्षा का मुद्दा घरेलू कृषि में उत्पादन/उत्पादकता बढ़ाए बिना प्रभावी ढंग से हल नहीं हो सकता।

## आर्थिक स्थिरता और सुरक्षा-जाल में भूमिका

कृषि आर्थिक मं दी की अवधि के दौरान कामगारों को सुरक्षा नेट प्रदान कर आर्थिक स्थिरता बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उदाहरण के लिए, हाल ही के विश्वव्यापी आर्थिक और वित्तीय संकट के दौरान बहुत से कामगारों को अपनी नौकरियों से हाथ धोना पड़ा। यह देखा गया है कि बहुत से ग्रामीण प्रवासी कामगार जो ऐसे समय में बेरोजगार होते हैं अस्थायी रूप से अपने गांवों में वापस चले जाते हैं। ऐसे कामगारों को कृषि कुछ सुरक्षा प्रदान करती है, क्योंकि वे अपने परिवारों से भोजन और आश्रय के रूप में सहायता प्राप्त करते हैं। इस प्रकार कृषि संकट के समय अर्थव्यवस्था को स्थिर करने में सहायता करती है। भारतीय अर्थव्यवस्था के हाल के विश्वव्यापी संकट से बचे रहने के कारणों में हमारा कृषि से क्टर संकट से प्रायः अप्रभावित रहा है।

## भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की बदलती हुई भूमिका

नव-उदारवादी नीति की शासन व्यवस्था के पिछले दो दशकों के दौरान, भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं जिसके फलस्वरूप संवृद्धि पथ कृषि से गैर-कृषि सेक्टर की ओर अंतरित हुआ है। अब अर्थव्यवस्था को कृषि संवृद्धि में उतार-चढ़ाव से पृथक कर लिया गया है क्योंकि आज कृषि का GDP में योगदान 15 प्रतिशत से भी कम है। परंतु गैर-फार्म सेक्टर में आय बढ़ने, बढ़ते हुए शहरीकरण, काम धंधों के क्षेत्र में महिलाओं की सहभागिता, आदि से कृषि उत्पादों की मांग का संयोजन महत्त्वपूर्ण तरीके से बदला है। हरित क्रांति अवधि के दौरान काफी सीमा तक कृषि विकास आपूर्ति चालित था और नीतिगत बल मुख्य रूप से खाद्य सुरक्षा प्राप्त करने पर था। आज कृषि विकास माँग चालित कारकों पर अधिक निर्भर है, (यद्यपि आपूर्ति पक्ष के कारक भी अभी प्रासंगिक है)।

भारतीय अर्थव्यवस्था के वैश्विक एकीकरण और प्रयोज्य आय में (विशेषकर मध्यम और उच्च वर्ग के परिवारों में) तीव्र वृद्धि से भारतीय उपभोक्ता कृषि उत्पादों में गुणवत्ता, विविधता, सुविधा और सुरक्षा की मांग कर रहे हैं। परिणामस्वरूप प्रसंस्करण, पैकेजिंग, ब्रांडिंग, विपणन, भंडारण एवं मूल्य वृद्धि की गतिविधियों में कृषि व्यापारिक कंपनियों की सहभागिता बढ़ गई है। इस प्रकार भूमंडलीकरण, एकीकृत उपयोग श्रृंखला, द्रुत प्रौद्योगिकी नवीनताओं, पर्यावरण आदि मुद्दों ने भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की भूमिका बदल दी है। इससे आधुनिक कृषि व्यापार के आधार पर कृषि में विविधताएँ लाने के लिए इसके कार्य क्षेत्र का विस्तार करना आवश्यक हो गया है। इससे न केवल रोजगार के अवसर बढ़ेंगे बल्कि, कृषि उत्पादों का इन विधियों से उपयोग भी बढ़ेगा : (i) कृषि उत्पाद का अपव्यय घटाकर; (ii) कृषि उत्पादों, विशेषकर नष्ट होने वाले उत्पादों, जैसे फल, सब्जियाँ और पशुधन उत्पाद की भंडारण अवधि सुधारकर। कई कृषि व्यापारिक कंपनियों ने पहले ही ये कार्य आरंभ भी कर दिये हैं: संविदा खेती, किसानों को प्रौद्योगिकी, आदान और विस्तार सेवाएँ प्रदान करना, पूर्व निर्धारित कीमतों पर उनका उत्पाद खरीदना, तथा इसके द्वारा किसानों के जो खिम न्यूनतम करना और बिचौलियों के बहुत से स्तरों को समाप्त करना।

## संदर्भ

Valdes A and Foster W (2010): Reflections on the Role of Agriculture in ProPoor Growth, World Development Vol. 38, No. 10, pp. 1362–1374, 2010.

Johnston, B. F., & Mellor, J. (1961): The role of agriculture in economic development. American Economic Review, 51(4), 566–593.

Lewis, A. (1955): *The Theory of Economic Growth*, R.D. Irwin. Homewood, Illinois.

Luc Christiaensen, Lionel Demery, Jesper Kuhl (2011): The (Evolving) Role of Agriculture in Poverty Reduction—An Empirical Perspective, Journal of Development Economics, Vol. 96, (2011), 239-254.

Schultz, T. W. (1964): *Transforming Traditional Agriculture*. Yale: Yale University Press.

Singh S.P. (2010): Agriculture under Neoliberal Policy Regime, in *Alternative Economic Survey, India: Two decades of Neoliberalism*, Dannis Books.

World Bank (2008): *World Development Report: Agriculture for Development*, The World Bank, Washington D.C.

हरीश कुमार